E-Learning material prepared by Dr. Dhananjay Vasudeo Dwivedi, Assistant Professor, Department of Sanskrit, Dr. Shyama Prasad Mukherjee University, Ranchi

कठोपनिषद् का प्रतिपाद्य

डा० धनञ्जय वासुदेव द्विवेदी

सहायक प्रोफेसर, संस्कृत विभाग,

डा० श्यामा प्रसाद मुखर्जी विश्वविद्यालय, राँची

अन्य उपनिषदों की भाँति कठोपनिषद् का प्रतिपाद्य भी जीव, आत्मा, ब्रह्म, जगत, सत्, असत्, जन्म, मृत्यु बन्धु, मोक्ष आदि का विवेचन करते हुए समाज को तत्कर्म में प्रेरित करना तथा भौतिक सत्ता की रिर्थकता एवं परमपुरुषार्थ मोक्ष की विवेचना करना है। इस दृष्टि से कठोपनिषद् में प्रतिपादित प्रमुख धारणाओं का वर्णन निम्नांकित स्तम्भों में अवलोकनीय है-

(१) भौतिक शरीर की नश्वरता-पिता के 'मृत्यवे त्वां ददामि' इस कथन पर नचिकेता ने जीवन की उपयोगिता अनुपयोगिता पर विचार किया। उसकी स्पष्ट धारणा है कि जीवन सस्य (धान्य) की भाँति है, जो जन्म लेता और समाप्त हो जाता है-

"सस्यमिव मर्त्यः पच्यते सस्यमिवाऽऽजायते पुनः"।।

इस एक ही वाक्य में शरीर की नश्वरता का जो चित्र नचिकेता ने खींचा है, वह विस्तृत व्याख्या से भी पूर्ण नहीं किया जा सकता। वह यह विचार भी व्यक्त करता है कि-"सोचो, तुम्हारे पूर्वज कहाँ गये? स्पष्ट है कि सब लोग पहले से ही मृत्यु के मुख में जाते रहे हैं तो इसमें सोच-विचार की आवश्यकता ही क्या है। यह तो खेती ही है, जिसका आना-जाना लगा ही रहता है"।

(२) अतिथि का महत्त्व- यम की अनुपस्थिति के कारण नचिकेता तीन रात्रियाँ उसके घर बिना कुछ खाये पिये बिताता है। यम को यह जानकर पीड़ा होती है, वह अतिथि के महत्त्व को एवं उसकी उपेक्षा के परिणामस्वरूप अनर्थ से भलीभाँति परिचित है, अतः प्रायश्चित स्वरूप कहता है-

"तिस्त्रो रात्रीर्यदवात्सीगृहे मे अनश्नन्ब्रह्मन्नतिथिर्नमस्यः।

नमस्तेऽस्तु ब्रह्मन्स्वस्ति मेऽस्तु तस्मान्प्रति त्रीन्वरान्वृणीष्व"।।

किसी के द्वार पर अतिथि के भूखे रहने से गृहस्वामी का सर्वस्व नष्ट हो जाता है। अतिथि अग्नि का स्वरूप है उसे जल प्रदान कर शान्त किया जाना चाहिये। स्मृतियों में भी निर्देश है-

"अतिथिर्यस्य भग्नाशो गृहात् प्रतिनिवर्तते।

सतस्मै दुष्कृतं दत्वा सुकृतमादाय गच्छति"।।

उपनिषदों में माता, पिता और गुरु के पश्चात् अतिथि की उपासना का ही विधान है-मातृदेवो भव। पितृदेवो भव। आचार्यदेवो भव। अतिथिदेवो भव।

यम अतिथि के महत्त्व के सम्बन्ध में आगे कहता हैं कि-"जो व्यक्ति विद्वान् अतिथि की पूजा नहीं करता उसे उसका भयंकर परिणाम उसे भोगना पड़ता है। यहाँ तक कि उसकी आशा, प्रतीक्षा सभी नष्ट हो जाती हैं-

"आशाप्रतीक्षे संगतं सूनृतां च, इष्टापूर्ते पुत्रपशूंश्च सर्वाम्।

एतद्वृङ्क्ते पुरुषस्याल्पमेधसो यस्यानश्नन् वसति ब्राह्मणो गृहे"।।

(३) नचिकेता की पितृभक्ति- यम के द्वारा तीन वर माँगने का कथन करने पर नचिकेता ने सर्वप्रथम वर "अपने रुष्ट पिता की प्रसन्नता और शान्ति" माँगा। विचारणीय है कि जो पिता उसे मृत्यु मुख में डाल रहा है, पुत्र उसकी मंगल कामना करे। यह उसकी पितृभक्ति का उत्कृष्ट स्वरूप है। उपनिषदों में ही 'पितृदेवो भव' की सीख दी गई है। पुराणों में पितृभक्ति के अनेक दृष्टान्त हैं, जहाँ पुत्र ने पिता की इच्छापूर्ति हेतु अपना सर्वस्व त्याग दिया है।

(४) अग्नि का महत्त्व-नचिकेता ने द्वितीय वर के रूप में स्वर्गसाधिका अग्नि का ज्ञान (अग्नि विज्ञान) माँगा। यम ने अग्नि चयन (अग्नि वेदी) की सम्पूर्ण प्रक्रिया का प्रतिपादन किया। संसार में अग्नि का महत्त्व अतिविशिष्ट है-यज्ञाग्नि से उद्भूत धूमवृष्टि कर सस्य वृद्धि करता है-"यज्ञाद्भवति पर्जन्यः, पर्जन्यादन्नसंभवः"।अग्नि की महत्ता को ध्यान में रखकर ही यम ने नचिकेता के नाम से स्वर्ग साधिका अग्नि का नाम-नाचिकेताग्नि किया।

(५) श्रेयमार्ग-कठोपनिषद् में मनुष्य के लिये 'श्रेय एवं प्रेय' दो मार्गों का उल्लेख है। सामान्यतः मनुष्य प्रेयमार्ग का अवलम्बन करता है। प्रेयमार्गी सांसारिक सुखों को प्राप्त करने की चेष्टा करता है। फलतः

वह पारलौकिक सुख से वंचित हो जाता है। श्रेय मार्ग का इच्छुक व्यक्ति सांसारिक सुखों के प्रति उदासीन रहकर जन्ममरण रूप बन्धनों से मुक्त होने का प्रयास करता है। यही मार्ग अपनाने का इस उपनिषद् में उपदेश है।

(६) पुनर्जन्म-नचिकेता के द्वारा आत्मविद्या विषयक प्रश्न का उत्तर देते हुए यम ने अनेक आध्यात्मिक रहस्यों का विश्लेषण करते हुए पुनर्जन्म के विषय में भी बतलाया है कि जो लोग केवल इसी लोक को सब कुछ मानते हैं और परलोक को कुछ नहीं समझते वे बार-बार मेरे समीप आते हैं-

"न साम्परायः प्रतिभाति बालं प्रमाद्यन्तं वित्तमोहेन मूढम्।
अयं लोको नास्ति पर इति मानी पुनः पुनर्वशमापद्यते मे"।।

यहाँ पुनः पुनः मेरे वश में आने की बात पुनर्जन्म को सिद्ध करती है। बिना पुनर्जन्म के यहाँ पुनः पुनः मेरे वश में आने की बार-बार यम के पास जाना सम्भव ही नहीं।

(७) आत्मा का स्वरूप-वैवस्वत यम ने कठोपनिषद् में नचिकेता के तृतीय वर "मृत्यु के पश्चात् आत्मा की सत्ता" विषयक प्रश्न के उत्तर में आत्मा को विस्तार से वर्णन करते हुए बतलाया है कि आत्मा सूक्ष्मातिसूक्ष्म अर्थात् अणुपरिमाण वाला है-

"अणीयान्ह्यतर्यमणुप्रमाणात्"

वह सभी जीवों में एक सा रहता है, अतः उसे समझना सर्वसाधारण के वश की बात नहीं। आत्मा एक शरीर से दूसरे में संक्रमण करती रहती है, इसे आवागमन सिद्धान्त कहते हैं। इस जीवात्मा का स्थान हृदय में है, किन्तु उनका दर्शन नहीं किया जा सकता।

इस आत्मा का ज्ञान केवल तत्वज्ञानी योगी को ही हो सकता है-

"तं दुर्दशं गूढमनुप्रविष्टं गुहाहितं गह्वरेष्ठं पुराणम्।
अध्यात्मयोगाधिगमेन देवं मत्वाधीरो हर्षशोकी जहाति"।।

आत्मतत्त्व धर्म-अधर्म, कृत-अकृत, भूत-भविष्यत् से सर्वथा पृथक् है। सभी वेदों का प्रतिपाद्य, तपस्या तथा ब्रह्मचर्य का उद्देश्यभूत है। यह न कभी जन्म लेता है, न मरता है-

"न जायते म्रियते वा विपश्चिन्नायं कुतश्चिन्नायं बभूव कश्चित्।

अजो नित्यः शाश्वतोऽयं पुराणो न हन्यते हन्यमाने शरीरे"।।

आत्मा के स्वरूप के विषय में कुछ भी नहीं कहा जा सकता। वह तो अणु से भी अणु एवं महान् से भी महान् है-**"अणोरणीयान् महतो महीयान्"।**

(८) आत्मज्ञान की महत्ता-आत्मज्ञान ही मोक्ष सिद्धि का साधन है। बिना आत्मज्ञान के मोक्ष प्राप्त नहीं हो सकता। इसीलिये कठोपनिषद् का अमर सन्देश है-

"उत्तिष्ठित जाग्रत प्राप्य वरान्निबोधत।

क्षुरस्य धारा निशिता दुरत्यया दुर्गं पथस्तत्कवयो वदन्ति"।।

अर्थात् उठो, जागो, श्रेष्ठ पुरुषों के पास जाकर ज्ञान प्राप्त करो। तत्त्वज्ञानी लोग छुरे की तेज की गई दुष्तर धार की तरह उस मार्ग को दुर्गम बतलाते हैं।

आत्मतत्त्व को जानने वाला पुरुष हर्ष शोकादि छोड़कर परमानन्द (मोक्ष) को प्राप्त करता है।

आत्मा एवं शरीर का रथ रूपक-आत्मतत्त्ववेत्ता महर्षियों ने आत्मा के जीवात्मा और परमात्मा के रूप में दो भेद किये हैं और दोनों को छाया तथा आतप के समान बतलाया है। इस आत्मतत्त्व के सम्यक् विश्लेषणार्थ कठोपनिषद् में 'रथ' का रूपक दिया गया है। आत्मा रथी है, शरीर रथ है, बुद्धि सारथी है, मन लगाम एवं इन्द्रियाँ घोड़े हैं। वे विषयों के मार्ग पर चलते हैं। इन्द्रिय और मन से युक्त आत्मा ही उसका भोक्ता है-

"आत्मनं रथिनं विद्धि शरीरं रथमेव तु।

बुद्धिं तु सारथिं विद्धि मनः प्रग्रहमेव च।।

इन्द्रियाणि हयानाहुर्विषयांस्तेषु गोचरान्।

आत्मेन्द्रियमनोयुक्तं भोक्तेत्याहुर्मनीषिणः"।।

अर्थात् आत्मा को रथी समझो, शरीर को ही रथ समझो, बुद्धि को सारथि समझो, तथा मन को ही लगाम समझो। मनीषी इन्द्रियों को घोड़े बतलाते हैं, उन इन्द्रियों के घोड़े होने पर उनके शब्द-स्पर्शादि विषयों को उनके मार्ग बतलाते हैं, और शरीर इन्द्रिय एवं मन से युक्त आत्मा को भोक्ता जीव कहते हैं।

निष्काम पुरुष इन्द्रियों की निर्मलता से आत्मा की महिमा को देखता है और शोक-रहित हो जाता है-

"धातुः प्रसादान्महिमानमात्मनः"।

आत्मा के विलक्षण कर्म का ज्ञान परमात्मा की कृपा से ही सम्भव है क्योंकि वह एक स्थान पर बैठा हुआ भी दूर चला जाता है, सोता हुआ भी घूम आता है। इसका ज्ञान केवल यम को है-

"नायमात्मा प्रवचनेन लभ्यो न मेधया न बहुना श्रुतेन।
यमेवैष वृणुते तेन लभ्यस्तस्यैष आत्मा विवृणुते तनु स्वाम्"।।

(९) परमात्मा (ब्रह्म) का स्वरूप-कठोपनिषद् में परमात्मा के स्वरूप का सुन्दर प्रतिपादन है। परमात्मा परागति है। वेदान्त में इसे ब्रह्म और सांख्य में पुरूष की संज्ञा दी गई है। जीवात्मा प्राणी के हृदय में निवास करता है। सांसारिक विषयों में लिप्त रहने के कारण जीवात्मा परमात्मा की पहचान नहीं कर पाता। जीवात्मा अपनी स्थूल बुद्धि से परमात्मा का साक्षात्कार नहीं कर सकता। सूक्ष्मदर्शी जीवात्मा अपनी तीक्ष्ण और सूक्ष्म बुद्धि से परमात्मा का साक्षात्कार कर सकता है। सांसारिक विषयों का परित्याग करके अध्यात्मयोग साधने से बुद्धि तीक्ष्ण और सूक्ष्म हो सकती है-

"एष सर्वेषु भूतेषु गूढात्मा न प्रकाशते।
दृश्यते त्वग्र्यया बुद्ध्या सूक्ष्मया सूक्ष्मदर्शिभिः"।।

यह परमात्मा शब्दरहित, स्पर्शरहित, रूप रहित, रस एवं गन्धरहित अविनाशी, नित्य, अनन्त, ध्रुव एवं परम है। इसे जानने वाला पुरूष जन्म-मृत्यु के बन्धन से मुक्त हो जाता है।

(१०) **परमगति (मोक्ष)**- पञ्च ज्ञानेन्द्रियाँ जब अपने-अपने विषय-कर्मों से विरत होकर मन के सहित आत्मस्थित हो जाती हैं तथा बुद्धि विविध विषयों की ओर से निश्चेष्ट हो जाती है उस अवस्था का नाम परमगति है-

"यदा पञ्चावतिष्ठन्ते ज्ञानानि मनसा सह।
बुद्धिश्च न विचेष्टति तामाहुः परमां गतिम्"।।

(११) **योग**-स्थिर इन्द्रियों की धारणा को विवेकी पुरुषों ने योग की संज्ञा दी है-

"तां योगमिति मन्यते स्थिरामिन्द्रियधारणाम्।

अप्रमत्तस्तदा भवति योगो हि प्रभवात्ययौ"।।

(१२) **ब्रह्मत्व या अमरता की प्राप्ति**- यम ने नचिकेता को आत्मविद्या का उपदेश करते हुए बतलाया कि जब समस्त कामनाएँ समाप्त हो जाती हैं अर्थात् कामनारूपी ग्रन्थियों का उच्छेदन हो जाता है, उस समय यह जीव ब्रह्मत्व या अमरता की प्राप्ति कर लेता है-

"यदा सर्वे प्रमुच्यन्ते कामा येऽस्य हृदि श्रिताः।

अथ मर्त्योऽमृतो भवत्यत्र ब्रह्म समश्नुते"।।